ज़िन्दगी का सिस्टम

आयतुल्लाहिलउज़्मा सैय्यिदुलउलमा सै० अली नक़ी नक़वी ताबा सराह
सम्पादनः नूरे हिदायत फ़ाउन्डेशन

क़िस्त-7

अपनी-अपनी जगह से सफ़र करने का हुक्म ज़िन्दा ही लोगों से दिया गया है और अबान बिन तग़लब और यूनुस बिन अर्बुर्रहमान भी ज़िन्दा ही थे जिनसे मसला पूछने का हुक्म दिया गया है। इस के अलावा बतौर सब पर लागू होने वाला कोई ऐसा आम हुक्म नहीं पाया जाता जिसमें मरे हुए लोग सभी आ सकते हों। रह गया अक़्ल का फ़ैसला कि न जानने वाले लोग जानने वाले लोगों से पूछें उस लेहाज़ से तो जिसके बारे में सच्चाई के ज़्यादा से ज़्यादा क़रीब पहुँचने का ख़्याल होगा, उसी की बात ज़्यादा मानी जाएगी।

जैसे-जैसे समय बीतता है इन्सान की सोच फैलती जाती है। पहले वाले लोगों की सोच समझ के नतीजे बाद वालों तक पहुँचते हैं, फिर उनपर ग़ौर और फ़िक्र और रिसर्च के बाद बहुत से नये दरवाज़े खुलते हैं, और बहस और नज़रिये के बहुत सी शाख़ें पैदा हाती हैं, इसलिये ज़िन्दा ही लोगों की तरफ़ जो इल्म व कमाल में ऊँचा दरजा रखते हों उन्हीसे दीनी मसलों को पूछना सच्चाई तक पहुँचने का ज़्यादा क़रीब रास्ता है।

फिर एक मुज्तहिद के फ़तवे के शब्दों में अक्सर तक़लीद करने वालों को धोखा हो सकता है, अब अगर मुज्तहिद ज़िन्दा है तो उससे पूछा जा सकता है कि इसका मतलब क्या है लेकिन अगर जीता न तो क्या किया जाए? याद रखिए शिया मज़हब में इल्मे फ़िक्ह (धर्म विधि शास्त्र) को जो हैरत भरी तरक़्क़ी हुई है वह सिर्फ़ इसी का नतीजा है कि मरे हुए मुज्तहिद की तक़लीद हमारे यहां जाएज़ नहीं रखी गई है वरना हमारे यहां आज इल्मे-फ़िक्ह उसी नुक़्ते पर नज़र आता जो 'इब्नेजुनैद असकानी' और 'अबुल अक़ील अमानी' वग़ैरह के नज़रियों में सीमित था जिनमें बहुत से मसलों का सच्चाई के ख़िलाफ़ होना आज उजागर हो गया है। शिया मज़हब में भी उसी तरह अक़्ल का जाम दिखाई देता है जिस तरह दूसरे गुटों में शरीयत के हुक्मों के बारे में मौजूद है। क्योंकि उन्होने अपने इल्म और खोजी ताक़तों को हमेशा के लिये मिटा दिया है उन कुछ आदमियों के चुनाव से जिनके घिसे पिटे कन्धों पर क़यामत तक के लोगों के अ़मल का बोझ रख दिया है।

कर्म का पहला ज़ीना

तक़लीद सही तरीक़े पर हो गई यानी सारी शर्तें पाये जाने वाले एक मुज्तहिद के फ़तवों को पा लिया गया चाहे उस किताब (तौज़ीहुल मसायल) को देख कर जिसमें उसके मसले इकट्ठा हैं और चाहे उससे ज़बानी पूछ कर और चाहे एक ऐसे आदमी का पता लगा कर जिसके पास उस मुज्तहिद के फ़तवे महफ़ूज़ हैं। ऐसे लोगों को ईरान और ईराक में 'मसला-गो' कहा जाता है। उन्हें मुज्तहिद के फ़तवे इस तरह महफ़ूज़ होते हैं कि कभी कभी खुद मुज्तहिद के सामने नहीं रहते। अफ़सोस है कि हिन्दुस्तान में इसका चलन नहीं है, क्योंकि यहां दीनी मसलों और शरीयत के हुक्मों को वैसे माना ही नहीं जाता। तक़लीद के बाद सबसे पहला अहम फ़र्ज़ (कर्तव्य) जो सामने आता है वह 'नमाज़' है। अब सबसे पहले जो वक़्त नमाज़ का आये, उसमें नमाज़ को वाजिब के तौर पर अदा करना है। नमाज़ के लिये शरीयत की तरफ़ से कुछ बुनियादी चीज़ें रखी गई हैं, जिनपर नमाज़ का सही होना निर्भर है। इन शर्तों में कुछ शर्तें तो वह हैं जिन पर नमाज़ के साथ साथ चला जाता है लेकिन नमाज़ से पहले जिस चीज़ का होना ज़रूरी है वह तहारत (पाकी) है और शरीयत के लेहाज़ से पाकी यानी वज़ू और गुस्ल के लिये शरीर और पहनावे का पाक होना ज़रूरी है। और पाक होने का लेहाज़ उस वक़्त तक नहीं हो सकता, जबतक कि उन नजासतों के बारे में जानकारी न हो जिनके हो जाने से इन्सान का जिस्म या कपड़ा नजिस हो सकता है।

इसलिये सबसे पहले ज़रूरत है कि 'नजासत' की जानकारी ली जाय।

चौथा अध्याए

नजासतें

बच्चों को शरीयत के अहकाम में सबसे पहले नजासतों के बारे में जानकारी लेना ज़रूरी है, ताकि बालिग़ होने पर शरीयत में बताए गये पाक होने के तरीक़े को अपना सकें, नजासत एक जगह से दूसरी जगह फैलने वाली चीज़ है, यानी वह छुटपने में गुनहगार तो नहीं होंगे मगर उनकी नजासत घर भर में फैल जाएगी और उसका असर माँ-बाप के आमाल पर पड़ेगा।

नजासत के मानी और उसका फ़लसफ़ा (Philosophy)

नजासत के मानी गन्दगी या मैलेपन के नहीं हैं और न ही ये समझना चाहिए कि वह कोई गुण है जो खुद किसी चीज़ में पाया जाता है, बल्कि वह शरीयत का एक हुक्म है। जैसे - किसी चीज़ का हलाल (वैध), हराम होना जो अलग-अलग मसलहतों की वजह से शरीयत की तरफ़ से लागू की गई है ।

इसकी कुछ क़िस्में हो सकती हैं :-

1. नजासत के हुक्म की वजह वाक़ई गन्दगी और मैलापन हो जो किसी चीज़ में पाई जाती है जिसकी वजह से आमतौर पर मज़हबी तमीज़ तहज़ीब वाले सभ्य लोगों को इस से घिन आती हो, चाहे वह किसी ख़ास मज़हब के पाबन्द न भी हों। चूँकि शरीयत फ़ितरत की है इसलिये उसने भी उन चीज़ों को नजिस माना है, इसमें पेशाब, पाख़ाना वग़ैरह आता है। इसी लिए जहाँ पर मन की घिन और गन्दगी कम है, वहाँ नजासत का हुक्म भी हल्का है। जैसे दूध पीता हुआ बच्चा जो अभी खाना न खाता हो उसके पेशाब से प्राकृतिक रूप में मन में उतनी घिन नहीं पैदा होती, जितनी एक बड़े खाना खाने वाले बच्चे या बूढ़े आदमी के पेशाब से। लिहाज़ा शरीयत ने भी फ़र्क़ रखा है यानी उस छोटे बच्चे के पेशाब के लिए जो अभी खाना न खाता हो, उसके पेशाब को क़ायदे से धोने की शर्त नहीं रखी है, बल्कि सिर्फ़ उस पर पानी डाल देना पाक होने के लिए काफ़ी समझा है।

2. दूसरी सूरत ये है कि नजासत का हुक्म उसमें पाये जाने वाले किसी ज़हरीलेपन या नुक़सान की वजह से हो। इसमें कुत्ता और सुवर की नजासत का हुक्म शामिल है, बल्कि इसमें इतनी ज़्यादा कड़ाई है कि कुत्ता अगर बर्तन को चाट ले या मुँह डाल दे तो जब तक बर्तन को तीन बार मिट्टी से मांज कर पानी से पाक न किया जाए तब तक पाक नहीं होगा ।

   आज जबकि मेडिकल रिसर्च तरक़्क़ी पर है, ये बात सामने आई कि कुत्ते की लार में ऐसे जरासीम होते हैं जिन्हें सिर्फ़ मिट्टी ही ख़त्म कर सकती है। सूवर के बारे में भी आज नही तो कभी इस तरह की बात सामने आई तो कोई ताज्जुब नहीं होगा। मुर्दे की नजासत भी शायद इसी बुनियाद पर है।

3. तीसरी सूरत ये है कि नजासत का हुक्म किसी चीज़ से मन मे घिन पैदा करने के लिए होता है जिससे उसके इस्तेमाल से मनाही के जो फ़ायदे हैं उन्हें ताक़त मिल सके।

   शराब की नजासत का हुक्म इसी तरह का है, बात ये है कि शराब का नशा शराब का आनन्द और शराब की मस्ती जो बराबर सुनने में आती रहती है वह इन्सान के मप को लुभाने और उसके इस्तेमाल का शौक़ पैदा करने का बहुत मज़बूत ज़रिया है। इससे हट कर सिर्फ़ 'नजासत' के हुक्म की वजह से मन में एक नफ़रत पैदा हो जाती है और शरीयत के पाबन्द एक इन्सान का दिल इसको नहीं चाहता बल्कि यहाँ तक की बीमारी की हालत और इलाज में जबकि ज़रूरत के तहत इसका पिलाना जाएज़ हो जाता है, उस वक़्त भी नजासत बाक़ी रहती है, क्योंकि यह एक नेचुरल सी बात है कि जिस काम को इन्सान कई बार करता है उससे वह हिल मिल जाता है और फिर ज़रूरत

न होने पर भी उसकी चाह पड़ जाती है। लेकिन अगर ये इस्तेमाल जो ज़रूरत से है, बराबर इस ध्यान के साथ हो कि ये एक घिनौनी चीज़ है जिसे ज़रूरत से इस्तेमाल करने पर मजबूर हो रहा हूँ तो चाह चाहत होने के बदले, इन्सान बेचैन रहेगा कि किसी तरह ये ज़रूरत हटे और मैं इसको छोड़ूँ, जैसे बहुत ही कड़वी दवा जो किसी मरीज़ को पीना पड़े, वह बार-बार डाक्टर से कहता रहेगा कि खुदा के लिए जल्द से जल्द इसे बन्द कीजिए । इसी तरह नजासत अन्दर से एक कड़वाहट पैदा कर देती है, जिसकी वजह से इन्सान शराब के इस्तेमाल पर मजबूर भी हो तो वह जल्दी इसको छोड़ने के लिए बेचैन रहेगा, और इस तरह इसके बिना ज़रूरत इस्तेमाल के जो नुक़सान पहुँचाने वाला है उनसे वह बचा रहेगा और शरीयत की तरफ़ से उसके हराम होने में जो फ़ायदा छिपा है वह पूरे का पूरा मिले।

4. चौथी सूरत ये हे कि इसके अलावा कोई और (छिपी) भलाई हो जो अस्ल में किसी और चीज़ से जुड़ी हो लेकिन वह इस चीज़ की नजासत के ज़रिये मिल जाती है।

इस बारे में मेरे नज़दीक काफ़िर की नजासत का हुक्म है ।

काफ़िरों की नजासत

चूँकि इस मसले में बदक़िस्मसती से मुसलमानों के अलग-अलग गुटों में फ़र्क़ पैदा हो गया है, और हमारे गुट के कुछ खुले ख़्याल के लोग इस मसले की मज़हबी हैसियत समझना चाहते हैं इसलिये ज़रूरत है कि इस पर साफ़ कमेन्ट किया जाए। इस मसले की सबसे ज़्यादा खुली हुई, साफ़ और उजागर दलील तर्क कुर्आन की ये आयत है *"इन्नमल मुशरेकून नजसुन"* मुशरिक लोग (खुदा का किसी और को साझी मानने वाले) पूरी तरह नजिस हैं।

इसमें इनके नजिस होने को सख़्ती के साथ बयान किया गया है। बात ये है कि लफ़ज 'नजस' 'जीम' (अरबी का एक वर्ण) पर ज़बर के साथ (ज) 'मसदर' (मूल) होता है। मसदर को किसी चीज़ की सिफ़त विशेषण (Adjective) बनाना ठीक नहीं होता जैसे - अरबी ज़बान में *"ज़ैदुन अदलुन"* यानी ज़ैद न्याय है, बेशक इसका मतलब ये है कि वह आख़िरी हद तक न्यायपूर्ण या न्यायायिक है, इतना कि जैसे वह खुद ही न्याय का पुतला बन गया है। इसी तरह ऊपर वाली आयत में कहने का मतलब तो यही है कि मुशरिक नजिस हैं, मगर इसी नजिस होने का इज़्हार बहुत ज़्यादा बल के साथ इस तरह बताया गया है कि जैसे ये लोग नजासत का पुतला ही हैं यानी खुद पूरी तरह 'नजासत' ही है, और *'इन्नमा'* हिस्र हैं जिससे ये मतलब मालूम होता है कि इनमें कोई पाकी का पहलू है ही नहीं और हर तरह से नजासत ही नजासत है।

सुन्नियों का ये कहना कि मुशरेकीन की रूह (आत्मा) और उनके दिल नजिस हैं, ये एक ऐसी बात है जो शब्दों के ज़ाहिरी मतलब से हरगिज़ मेल नहीं खाती, ख़ास मासूम इमामों(अ०) ने जो कुर्आन के असली मानी और मतलब बयान करने वाले हैं, इस मतलब और मानी की कोई तरफ़दारी नहीं की है।

यहाँ पर जो कुछ भी सवाल पैदा होता है वह ये कि मुशरेकीन का घेरा कितना बड़ा है और यह कि उनमें कौन गुट आ सकता है ।

हमारे देश के रहने वाले हिन्दू देखने में मूर्तियों की पूजा करते हैं मगर इनमें एक खुले विचार के वर्ग की ओर से कहा जाता है कि हम इन को खुदा थोड़े ही समझते हैं, हम तो सिर्फ़ एक खुदा को मानते हैं (यानी ईश्वर को निराकार मानते हैं) और ये मूर्ति सिर्फ़ उसकी याद का एक ज़रिया है। ये कहकर वे एकेश्वर वादी बन जाते हैं और अपने आप को शिर्क के घेरे से अलग कर लेते हैं।

यहूदी और इसाई किताब वाले हैं इसलिए वह मुशरिक नहीं हैं, क्योंकि जब हम ग़ौर करते हैं और कुर्आन की दूसरी आयतों को देखते हैं तो पता चलता है कि कुर्आन मजीद की नज़र में ये सब वर्ग शिर्क के घेरे में आती हैं।

